International Journal of Humanities and Social Science Research
www.socialsciencejournal.in
ISSN: 2455-2070
Received: 28-04-2022, Accepted: 14-05-2022, Published: 30-05-2022
Volume 8, Issue 3, 2022, Page No. 62-67

भारतीय संघवाद एवं इसके बदलते आयाम

सत्येंन्द्र कुमार, आशा राणा
[1] शोध छात्र, राजनीति विज्ञान विभाग, राधे हरी राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, काशीपुर, उत्तराखंड, भारत
[2] विभागाध्यक्ष, राजनीति विज्ञान विभाग, राधे हरी राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, काशीपुर, उत्तराखंड, भारत

सारांश
संघवाद, अपने मूल अर्थ में, केंद्र सरकार और क्षेत्रीय सरकारों के बीच विधायी और कार्यकारी शक्ति का विभाजन है ताकि प्रत्येक सरकार अपने क्षेत्र में स्वतंत्र रूप से काम कर सके। भारत जैसे देश में संघवाद अत्यंत महत्वपूर्ण है क्योंकि यहाँ भिन्न भिन्न धर्मों, पृष्ठभूमियों एवं संस्कृतियों से सम्बन्ध रखने वाले लोग एक साथ रहते हैं। ऐसी स्थिति में न तो एक सरकार के लिए पूरे देश के लिए कानून बनाना संभव होगा और न ही विभिन्न संस्कृतियों, भाषा, और विविध पृष्ठभूमि वाले लागों के हित में यह वांछनीय होगा। इसलिए केंद्र सरकार भारत के पूरे और किसी भी हिस्से के लिए कानून बना सकती है और संबधित राज्य सरकारें विभिन्न क्षेत्रों में रहने वाले लोगों की सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक परिस्थितियों के अनुसार कानून बना और लागू कर सकती है। आधुनिक युग में संघवाद दो भिन्न प्रवृत्तियों, सामान्य हितों की व्यापकता और स्थानीय स्वायत्तता की आवश्यकता के बीच सामंजस्य का एक सिद्धांत है। यह शोध पत्र भारत में संघवाद की अवधारणा के साथ साथ संघवाद के बदलते आयामों की जांच करेगा। इसके अलावा, यह शोध पत्र संवैधानिक लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए सहकारी और सहयोगी संघवाद की जरूरतों को उजागर करेगा।

मूल शब्दः संघवाद, परिसंघात्मक, केन्द्रीय सरकार, क्षेत्रीय सरकार, लोकतन्त्र, विकेन्द्रीकरण

प्रस्तावना
आधुनिक विस्तृत राज्यों का शासन केन्द्रीय रूप में नहीं किया जा सकता है अत: शासन की सुविधा के लिये राज्यों को कई इकाइयों में बांटा जाता है। शासन शक्ति के एक स्तर पर केन्द्रीकरण या अनेक स्तरों पर वितरण के आधार पर शासन व्यवस्थाओं के तीन प्रतिमान मान्य रहे हैं। पहला एकात्मक प्रतिमान जिसमें राज्य शक्ति का प्रयोग एक स्थान (केन्द्रीय सत्ता) में केन्द्रित रहता है, दूसरा परिसंघात्मक (Confederal) प्रतिमान जिसमें राज्य शक्ति का प्रयोग अनेक स्थानों पर केन्द्रित रहता है, तथा तीसरा संघात्मक (federal) प्रतिमान जिसमें राज्य शक्ति का प्रयोग दो स्तरों पर स्थापित, केन्द्रीय व राज्य की सरकारों में निहित रहता है।
संघवाद के दो आयाम संभव हैं– गतिज व स्थैतिक। स्थैतिक स्वरूप के अनुसार संघवाद एक व्यवस्था है, वहीं गत्यात्मक स्वरूप के अन्तर्गत यह एक प्रक्रिया में परिवर्तित हो जाता है। संघवाद का व्यवस्थागत स्वरूप केन्द्रीय व क्षेत्रीय सरकारों के बीच शक्ति वितरण पर आधारित होता है। डायसी का भी मानना है कि शक्तियों का विभाजन संघवाद का आवश्यक लक्षण है। एक संघीय राष्ट्र जिस उद्देश्य से बनाया जाता है वह है राष्ट्रीय सरकार व पृथक राज्यों के बीच सत्ता का विभाजन करना"
'संघ' शब्द का अंग्रेजी रूपान्तर 'फेडरेशन' (Federation); लैटिन भाषा के शब्द 'फोइडस' (Foedus) से निकला है जिसका अर्थ है संधि या समझौता। अत: शब्द व्युत्पत्ति के दृष्टिकोण से समझौते द्वारा निर्मित राज्य को संघ राज्य कहा जाता है जिसमें अनेक स्वतंत्र राज्य अपने कुछ सामान्य उद्धेश्यों की पूर्ति के लिये केन्द्रीय सरकार संगठित करते हैं और शेष विषयों में अपनी–अपनी पृथक स्वतंत्रता सुरक्षित रखते हैं।
इस प्रकार संघ राज्य में एक संघीय या केन्द्रीय सरकार (Federal Government) होती है और कुछ संघीभूत इकाइयों (Federal Units) की सरकारें होती हैं। संघ का निर्माण एक लिखित समझौते, जो एक संविधान का रूप होता है, के द्वारा होता है। संविधान द्वारा केन्द्र तथा इकाइयों की सरकारों के बीच शासन शक्तियों का स्पष्ट विभाजन कर दिया जाता है सामान्य हित के विषयों का प्रबन्ध–केन्द्रीय सरकार के हाथ में रहता है और क्षेत्रीय महत्व के विषयों का संघीय इकाइयों के हाथ में।
दोनों सरकारें अपने–अपने विषय–क्षेत्र में स्वतंत्र रहती हैं। उनके अधिकार क्षेत्र या सीमा में परिवर्तन संवैधानिक संशोधन प्रक्रिया तथा उनकी सहमति से ही सम्भव है। दोनों सरकारों की शक्तियां मौलिक होती हैं और दोनों का अस्तित्व संविधान पर निर्भर करता है। इस प्रकार संघ राज्य दोहरी सरकार (dual polity) है। यह दो प्रकार की समकक्ष (co-equal) सरकारों का राज्य है।
शुद्ध संघवाद ऐसी व्यवस्था है जिसमें दोनों ही स्तर की सरकारें, सम्पूर्ण संघीय राजनीतिक व्यवस्था के सन्दर्भ में न तो एक दूसरे पर पूर्णतया निर्भर रहती हैं और न ही एक–दूसरे से पूर्णतया स्वतन्त्र रह पाती हैं वर्तमान संघीय राजनीतिक व्यवस्थाओं में कुछ नीति निर्गत (Policy output) केन्द्रीय व राज्यों की सरकारों की ऐसी जटिल अन्तःक्रिया के परिणाम होते हैं जिसमें दोनों ही स्तर की सरकारें, निर्णयों को लेने में चाहें वे किसी भी स्तर की सरकार के अधिकार क्षेत्र से सम्बद्ध हों व उन्हें लागू करने में, बहुत कुछ पारस्परिकता, सहयोग, सहभागिता तथा सद्भाव का प्रदर्शन करती हैं।

जबकि, संघवाद की परम्परागत धारणा का संकेत दोनों ही स्तर की सरकारों में अन्तःक्रिया के ऐसे प्रतिमान की ओर है जिसमें प्रत्येक स्तर की सरकार का पृथक अधिकार क्षेत्र और सुनिश्चित स्वतन्त्रता है।

संघ निर्माण के साधारणतः दो तरीके हैं–सम्मिलन (Integration) और पृथक्करण (Disintegration) प्रथम प्रक्रिया के अनुसार स्वतंत्र राज्य स्वेच्छा से कतिपय सामान्य हितों की पूर्ति के लिये संघ का निर्माण करते हैं। द्वितीय–प्रक्रिया के अनुसार एकात्मक राज्यों को तोड़कर स्वतंत्र इकाइयों का निर्माण किया जाता है और कुछ विषयों में उन्हें स्वतंत्र अधिकार दे दिया जाता है, संयुक्त राज्य अमेरिका में संघ निर्माण के पूर्व संयुक्त–राज्य में 13 स्वतंत्र राज्य थे जिनका एक राज्यमण्डल (Confedeation) था। इन्हीं राज्यों ने 1787 ई. में संगठित होकर संघ का निर्माण किया। विभिन्न देशी राज्य भारत संघ में सम्मिलन की प्रक्रिया के द्वारा सम्मिलित हुये हैं परन्तु भारत ब्रिटिश शासनकाल में 1935 के भारत–शासन अधिनियम के पूर्व एकात्मक राज्य था जिसमें अनेक प्रांत थे। ये प्रांत संघ में पृथक्करण के आधार पर सम्मिलित हुये।

भारतीय संघात्मक व्यवस्था का विकास

लोकतन्त्र व संघवाद भारतीय संवैधानिक संरचना के प्रमुख संस्थान हैं। संघवाद केन्द्र व राज्यों के बीच शक्ति के वितरण को सुनिश्चित करता है, जबकि लोकतंत्र शक्ति के प्रयोग में जन भागीदारी को सुनिश्चित करता है। भारत में स्वतन्त्रता के बाद से ही संघात्मक व्यवस्था को अपनाने के विषय में आम सहमति थी। संविधान सभा में संघात्मक व्यवस्था को अपनाने के सम्बन्ध में कोई विवाद नहीं था, परन्तु किस प्रकार की संघात्मक व्यवस्था को अपनाया जाये इस प्रश्न को लेकर कुछ तीव्र मतभेद अवश्य सामने आये।

अंततः राष्ट्र के भौगोलिक विस्तार, जनसंख्या तथा सामाजिक–आर्थिक विभिन्नताओं को ध्यान में रखते हुये, भारतीय मान्यता 'अनेकता में एकता' को कार्यान्वित करते हुये संघात्मक व्यवस्था को कुछ एकात्मक तत्वों के समावेश के साथ अपनाया गया। संविधान निर्माताओं ने भी स्वीकार किया कि भारतीय संविधान पूर्णतः संघात्मक संविधान की श्रेणी में नहीं रखा जा सकता है।

भारत में संघीय विचारधारा का क्रमिक विकास ब्रिटिश शासनकाल में ही प्रारम्भ हो गया था। यद्यपि ब्रिटिश शासकों ने स्वहित के लिये भारत में विदेशी राज्य की सुरक्षा और दृढ़ता के दृष्टिकोण से एकात्मक व्यवस्था को अपनाया। यह व्यवस्था व्यवहारतः पूरे ब्रिटिश शासनकाल तक कायम रही। यहाँ तक की ब्रिटिश भारत और देशी राज्यों को (यद्यपि दोनों एक ही भूखण्ड के अंग थे) एक राजनीतिक व्यवस्था के अन्तर्गत नहीं रखा गया। सरकारी तौर पर संघीय व्यवस्था का बीजारोपण लॉर्ड मेयो (1870) की विकेन्द्रीकरण की नीति में पाया जाता है। औपचारिक रूप से 1918 में सर्वप्रथम मांटेग्यू चेम्सफोर्ड रिपोर्ट ने अप्रत्यक्ष रूप से संघीय व्यवस्था के पक्ष में अपना मत प्रकट किया। उक्त रिपोर्ट में प्रस्ताविक द्वैध शासन प्रणाली ने संघीय विचारधारा के विकास में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया।

मांटेग्यू चेम्सफोर्ड, भारत शासन अधिनियम (1919) द्वारा राज्यों में द्वैध शासन की व्यवस्था की गई। यह भारत में उत्तरदायी सरकार का पहला आंशिक प्रयोग था। इस अधिनियम द्वारा प्रान्तों की व्यवस्थापिकाओं को सीमित आर्थिक अधिकार प्रदान किये गये। (पूर्व में 1861 में इन्हें विधायन सम्बन्धी अधिकार प्रदान किये गये थे) प्रान्तीय शासन को दो भागों में बांटा गया– हस्तांतरित विषयों के प्रशासन हेतु प्रान्तीय विधानमण्डल उत्तरदायी था, जबकि संरक्षित विषयों का प्रशासन गवर्नर के हाथ में रखा गया। परन्तु केन्द्रीय स्तर पर संघात्मक व्यवस्था को पूर्णतः नकार दिया गया, यद्यपि 1919 के इस अधिनियम द्वारा अखिल भारतीय मामलों में वायसराय को परामर्श देने के लिये देशी राजाओं के एक नरेश मण्डल की स्थापना की गई, जिसे 'Chambers of Princes' का नाम दिया गया।

1935 ई. के अधिनियम द्वारा भारत के लिये एक संघीय व्यवस्था का प्रावधान किया गया था। इसमें 14 गवर्नर प्रान्त, 6 चीफ कमिश्नर प्रान्त व देशी रियासतें शामिल होनी थीं। ब्रिटिश भारत के प्रान्तों का शामिल होना अनिवार्य था, जबकि देशी रियासतों का शामिल होना ऐच्छिक , संघीय इकाइयों को अपने क्षेत्र में पूर्ण स्वायत्तता प्राप्त होती।

केन्द्र व राज्यों के बीच तथा राज्यों के पारस्परिक झगड़ों को सुलझाने के लिये एक संघीय न्यायालय की स्थापना की गई थी। संविधान को संशोधित करने की प्रक्रिया जटिल थी। संशोधन का अधिकार केन्द्रीय विधानमण्डलों को नहीं दिया गया बल्कि यह अधिकार ब्रिटिश संसद ने अपने पास रखा।

इस प्रकार संविधान निर्माताओं के समक्ष यह स्पष्ट था कि संघीय व्यवस्था को अपनाया जाना अनिवार्य था, परन्तु मूल प्रश्न यह था कि इसे किस रूप में अपनाया जाये। 1929 में बटलर समिति के अनुसार– "राजनीतिक दृष्टिकोण से दो भारत हैं, उन्हें एक सूत्र में जोड़ना राजनीतिज्ञों के सम्मुख प्रमुख समस्या थी।" स्वतन्त्रता के पश्चात् समस्त प्रान्तों व देशी राज्यों का विलयन साथ ही उनके प्रशासन का प्रजातन्त्रीकरण भी आवश्यक था। संघात्मक भारत के अन्तर्गत ही उन्हें विलीन किया जा सकता था, क्योंकि इसी व्यवस्था में राज्य की स्वायत्तता व राष्ट्र की एकता का समन्वय भी संभव था। अतः विलयन व एकीकरण की प्रक्रिया द्वारा देशी राज्यों को प्रान्तों की भांति भारतीय संघ में शामिल किया गया।

के.बी. राव के अनुसार– "भारत मूलतः एवं स्वभावतः संघात्मक व्यवस्था हेतु उपयुक्त देश था।" भारत विभिन्न धर्म, भाषा, जाति व संस्कृति से युक्त एक विशाल देश है, जिसे एकात्मक व्यवस्था के माध्यम से एक सूत्र में बांधना असंभव था। शासन की सुगमता के दृष्टिकोण से उसे विभिन्न स्वायत्तपूर्ण प्रशासनिक इकाइयों में विभाजित करना अवश्यंभावी था। इस प्रकार विशाल आकार तथा विभिन्नतायें संघात्मक व्यवस्था हेतु निर्धारक तत्व बने।"भारत की व्यापक विभिन्नता को देखते हुये भी इस व्यवस्था को अपरिहार्य माना गया।"

संघ निर्माण के साधारणतः दो तरीके हैं

1. सम्मिलन (Integration)
2. पृथक्करण (Disintegration)

भारतीय संघ के निर्माण में दोनों पद्धतियों को अपनाया गया है। विभिन्न देशी राज्य सम्मिलन की प्रक्रिया द्वारा भारतीय संघ में शामिल हुये। इससे पूर्व इनका पृथक अस्तित्व था। वे स्वेच्छा से भारतीय संघ में शामिल हुये। दूसरी ओर ब्रिटिश

भारत का स्वरूप एकात्मक था, जिसमें अनेक प्रान्त थे। इन प्रान्तों को संघ की अवयवी इकाई के रूप में मान्यता प्रदान की गई। पृथक्करण की प्रक्रिया द्वारा ब्रिटिश भारत के प्रान्त संघ के राज्य बन गये।

संविधान के प्रथम अनुच्छेद के अनुसार –"India that is Bharat shall be a Union of States" अर्थात 'भारत राज्यों का संघ है।' यद्यपि संविधान निर्माता राज्य संघ की स्थापना करना चाहते थे, फिर भी संघ शब्द के स्थान पर 'यूनियन' शब्द का प्रयोग किया गया।

डॉ. अम्बेडकर के अनुसार प्रान्तीय एकीकरण की आवश्यकता तथा राजनीतिक स्थायित्व ऐसे कारण हैं जिनके कारण संघवाद शब्द का प्रयोग संविधान में नहीं किया गया है। संविधान निर्माता संघात्मक व्यवस्था को अपनाने के विरुद्ध नहीं थे। उनका मानना था कि संघवाद भारतीय संविधान की आत्मा के रूप में विद्यमान रहे इसके लिये यह अनिवार्य नहीं है कि यूनियन शब्द के स्थान पर फेडरेशन शब्द का प्रयोग किया जाये।

भारतीय राज्यो को संघीय योजना के तहत लाने के लिए, यह भी घोषणा की गई थी कि संघ के पास रक्षा, विदेशी मामलों और संचार की केवल तीन शक्तियों होनी चाहिए, जिन्हें कैबिनेट मिशन योजना द्वारा स्वीकार किया गया था, संघ के राज्य स्वायत्त इकाईयों होंगे, जिनके पास सभी अवशिष्ट शाक्तियों होंगी। 3 जून 1947 की माउंटबेटन योजना ने देश के विभाजन और पाकिस्तान के प्रस्तावित राज्य के लिए एक अलग संविधान सभा की घोषणा की। देश के विभाजन के निर्णय की घोषणा के तुरन्त बाद, 5 जून 1947 को संघ संविधान समिति की बैठक हुई और निर्णय लिया कि भारत का संविधान एक मजबूत केन्द्र के साथ संघीय होना चाहिए। यह भी निर्णय लिया गया कि तीन विधयी सूचियां होनी चाहिए संघ सूची, समवर्ती सूची, राज्य सूची एवं यह भी निर्णय लिया गया कि अवशिष्ट शक्तियों को केन्द्र को सौपा जाये न की राज्यों की संविधान सभा द्वारा इसकी पुष्टि की गई और संघ शक्ति समिति द्वारा लागू किया गया।

भारतीय संघवाद का आलोचनात्मक विश्लेषण

आलोचको का ऐसा मानना है कि भारतीय संविधान संघवाद के कुछ आवश्यक परीक्षणों को संतुष्ट नहीं करता है चूंकि अमेरिकी संविधान में वर्णित संघात्मक व्यवस्था को एक आदर्श के रू‍ में मान्यता प्राप्त है और यहां की संघात्मक व्यवस्था में इकाईयों का अपना अलग संविधान बनाने का अधिकार प्राप्त है अमेरिकी संविधान में नागरिको के लिए दोहरी नागरिकता का भी प्रावधान है जबकि भारतीय में संविधान यह व्यवस्था नहीं है।

जबकि संघवाद की आवश्यक विशेषताएं जैसे सरकारों का द्वैत, संघ और राज्य सरकारों के बीच शक्तियों का वितरण संविधान की सर्वोच्चता, एक लिखित संविधान का अस्तित्व और सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि संविधान के अंतिम व्याख्याकारो के रूप में न्यायालयों का अधिकार, सभी हमारी संवैधानिक योजना में मौजूद है। लेकिन साथ ही, संघीय सिद्वांतों से विचलन के भी कई आधार हैं जिसके कारण कई संवैधानिक विशेषज्ञों ने संविधान की संघीय प्रकृति पर संदेह किया। उन्होनें इसे कम संघीय और अधिक एकात्मक बताया। क्योंकि केन्द्र सरकार राज्य सरकारों की तुलना में अधिक शक्तिशाली है। केन्द्र और राज्य के बीच शक्ति का वितरण सातवीं अनुसूची में वर्णित तीन सूचियों द्वारा किया जाता है, लेकिन सभी महत्वपूर्ण विषयों को या तो संघ सूची या समवर्ती सूची में रखा जाता है और यह वितरण केन्द्र को मजबूत बनाता है।

भारतीय संविधान में कुछ एकात्मक विशेषताएं हैं जो निम्न हैं।

"संसद राज्यों के क्षेत्रों, सीमाओं या नामों को बदल सकती है।"

"आपातकाल के दौरान, केन्द्रीय संसद को राज्य सूची के विषयों के सम्बन्ध में काननू बनाने का अधिकार है।"

"संसद को राज्य सूची में शामिल किसी भी विषय के सम्बन्ध में कानून बनाने की शक्ति होगी, यदि राज्यसभा अपने उपस्थित और मतदान करने वाले 2/3 सदस्यों द्वारा का एक संकल्प पारित कर दे कि यह राष्ट्रीय हित में आवश्यक है।",

"संघ और राज्य के कानूनों के बीच असंगति के मामले में, संघ का कानून मान्य होगा।"

"यदि दो या दो से अधिक राज्यों की विधायिका एक प्रस्ताव पारित करती है कि संसद के लिए राज्य सूची के विषय पर कानून बनाना वैध होगा। "

''संसद के पास किसी भी अंतर्राष्ट्रीय समझौते, संधि और सम्मेलन के कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी शक्ति होगी।''

''यदि समवर्ती सूर्ची के विषय पर संसद द्वारा बनाए गए कानून और राज्य की विधायिका द्वारा बनाए गए कानून के बीच कोई विरोध है, तो संसद द्वारा बनाया गया कानून क्षेत्र में आ जाएगा।''

इसके अतिरिक्त, ''राज्य के राज्यपाल को राष्ट्रपति के विचार के लिए राज्य विधानमंडल द्वारा पारित विधेयक को आरक्षित करने का अधिकार है और राष्ट्रपति ऐसे विधेयक पर अपनी सहमति देने के लिए बाध्य नहीं है।''

''संघ की कार्यकारी शक्ति राज्यों को निर्देश देने और राज्य सूची में मामलों को निष्पादित करने के लिए सघं के अधिकारियों को सशक्त बनाने के लिए विस्तारित होगी।''

इसके अलावा, ''यदि किसी राज्य की सरकार संविधान के प्रावधानों के अनुसार नहीं चलती है, तो राष्ट्रपति को ऐसे राज्य में राष्ट्रपति शासन लगाने की शक्ति है, या तो राज्यपाल की रिपोर्ट पर या अन्यथा।''

राजकोषीय संघवाद केंद्र और राज्य से संबंधित कराधान और व्यय के बीच जिम्मेदारियों को संदर्भित करता है। केंद्र और राज्य सरकार दोनों कर लगा सकते हैं और एकत्र कर सकते हैं। लेकिन हमारे संविधान में कर लगाने के लिए केंद्र के पास अधिक शक्तियां निहित हैं और केंद्र को कर राजस्व में राज्य का हिस्सा निर्धारित करना है। राज्यों के पास उतने वित्तीय संसाधन नहीं हैं जितने केंद्र के पास हैं। वित्तीय मामलों में राज्य हमेशा केंद्र से सहायता मांगते हैं। लेकिन लगता है कि जीएसटी के बाद, स्थिति बदल गई है और राज्य सरकारें वस्तुओं की खपत (एसजीएसटी) और कृषि आय पर कर लगा सकती हैं।

कई एकात्मक विशेषताओं के बावजूद हमारे संविधान को संघीय माना जाता है क्योंकि हमारे संविधान में संघीय संविधान की लगभग सभी विशेषताएं मौजूद हैं। ''संघीय कहलाने के लिए, यह आवश्यक नहीं है कि एक संविधान पूरी तहर से संघीय सिद्धांत को अपनाए। यह पर्याप्त है यदि संविधान में संघीय सिद्धांत प्रमुख सिद्धांतों के रूप में हैं। इसलिए संविधान

में एकात्मक विशेषताओं की उपस्थिति, जो संविधान को अर्ध संघीय बना सकती है, संविधान को व्यवहार में मुख्य रूप से संघीय होने से नहीं रोक सकती है।

भारतीय संघवाद के लिए चुनौतियां

क्षेत्रवाद

इंडिया जोकि भारत है राज्यों का संघ होगा, (India that is Bharat Shall be Union of States) यह इंगित करता है कि सभी राज्य संघ का हिस्सा हैं और किसी भी राज्य को संघ से अलग होने का अधिकार नहीं है। पूरे संविधान में, इस तथ्य पर जोर दिया गया है कि भारत एक संयुक्त राष्ट्र है और इसे राज्यों के संघ के रूप में वर्णित किया गया है। संविधान का अनुच्छेद 16 रोजगार से संबंधित मामलों में अवसर की समानता की गारंटी देता है और यह जन्म स्थान के आधार पर भेदभाव को रोकता है। जबकि अनुच्छेद 19 (1) (डी) प्रत्येक नागरिक को भारत के पूरे क्षेत्र में स्वतंत्र रूप से घूमने की स्वतंत्रता देता है और अनुच्छेद 19 (1) (एफ) भारत के क्षेत्र के किसी भी हिस्से में रहने और बसने की स्वतंत्रता प्रदान करता है। लेकिन हमने देश के विभिन्न हिस्सों में क्षेत्रवाद की भावना के कारण नागरिकों पर हमले की कई घटनाएं देखीं हैं। देश के दक्षिण भाग में लोग उपेक्षित महसूस करते हैं। देश के विभिन्न हिस्सों में नए राज्यों के गठन की मांग प्रमुख हो गई है। उत्तर प्रदेश को चार भागों में विभाजित करने और पश्चिम बंगाल से गोरखालैंड के विभाजन की मांग बढ़ते क्षेत्रवाद के उदाहरण है।

भाषा संघर्ष

क्षेत्रीय भाषाओं के कारण विभिन्न राज्यों में भारतीय संघवाद के लिए भाषा संघर्ष भी चुनौतियों में से एक है। भारत में, किसी भी भाषा को राष्ट्रभाषा नही माना जाता है। संविधान का अनुच्छेद 343 कहता है कि संघ की आधिकारिक भाषा देवनागरी लिपि में हिंदी होगी। हालिया विवाद राष्ट्रीय शिक्षा नीति मसौदे में त्रिभाषा फार्मूले पर इसकी सिफारिश और स्कूलों मे अनिवार्य हिंदी शिक्षण को लेकर है। नीति के अनुसार, त्रिभाषा एक बहुभाषी देश के लिए बहुभाषी संचार क्षमताओं को बढ़ावा देने का एक साधन है और बच्चों को अब प्रारंभिक चरण से शुरू करके तीन भाषाओं में शिक्षित किया जाएगा। इससे तमिलनाडु में राजनीतिक खेमे में आक्रोश फैल गया। यह तब हुआ जब यह केवल एक मसौदा था और पहले 30 जून 2019 तक आपत्तिया आमंत्रित की गई और इसे 31 जुलाई 2019 तक बढ़ाना पड़ा। ऐसा माना गया कि मसौदा नीति को जनसुनवाई के बाद ही लागू किया जाना चाहिए। डीएमके और अन्य राजनीतिक दलों ने हिंदी कदम का कड़ा विरोध किया है और वे तीन भाषा नीति लागू करने के खिलाफ एकजुट हुए है, क्योंकि राष्ट्रीय शिक्षा नीति के मसौदे में यह सुझाव दिया गया है कि दक्षिण राज्यों में बच्चों को अनिवार्य रूप से हिंदी सीखने की आवश्यकता है तमिनाडु और कुछ अन्य राज्यों के विरोध के कारण 3 जून 2019 को राष्ट्रीय शिक्षा नीति के मसौदे से सभी स्कूलों मे हिंदी के अनिवार्य शिक्षण की सिफारिश करने वाले खंड को हटा दिया गया। यह इंगित करता है कि हमारे देश में भाषा आधारित मतभेद मौजूद है।

अविनाशी संघ और विनाशकारी इकाइयाँ

राष्ट्र की एकता और अखंडता की रक्षा के लिए संघ को अविनाशी बनाया गया है। लेकिन यह राज्यों पर लागू नही होता क्योंकि राज्यों को अलग या विलय किया जा सकता है लेकिन संघीय लोकतंत्रों मे यह राज्यों की सहमति से ही संभव है। जबकि भारत में राज्यों को बनाने या पुनः स्थापन की शक्ति संसद के पास है। व्यवहार मे अधिकांश राज्यों का गठन राज्यों की पूर्व सहमति से किया गया है। लेकिन तेलंगाना के गठन के मामले में इस प्रथा की अनदेखी की गई, आंध्र प्रदेश को विभाजित करने का निर्णय संघवाद और देश के भविष्य के बारे मे महत्वपूर्ण प्रश्न उठाता है। यह भारत में पहली बार था कि किसी राज्य को विभाजित करने की मांग, राज्य विधायिका की सहमति के बिना, हितधारकों और क्षेत्रों के बीच बातचीत के बिना मान ली गई। 1987 के बाद भी राज्य गठन के हर मामले में राज्य विधानमंडल की सहमति ली जाती थी। संघवाद के व्यापक सिद्वांत में घटक इकाइयों और उनके लोगो की इच्छा सहमति को एक राज्य के गठन या क्षेत्र के विलय से पहले आवश्यक समझा गया है, जब तक कि अत्यधिक राष्ट्रीय हित संसद द्वारा कारवाई की मांग नही करता है। 2000 मे झारखंड, उत्तराचंल और छत्तीसगढ़ बनाने में भी यही प्रक्रिया देखी गई। पहले यह आवश्यक नही था लेकिन संविधान के तहत, व्यवहार में प्रत्येक राज्य का गठन पूर्व सहमति से किया गया है, ज्यादातर मामलों में एक स्वतंत्र आयोग द्वारा विस्तृत, निष्पक्ष समीक्षा के बाद। सुप्रीम कोर्ट ने दो मामलों में अनुच्छेद 3 की व्याख्या के सवाल पर विचार करते हुए कहा कि ''राज्य विधानमंडल के विचारों को निश्चित रूप से ध्यान में रखा जाएगा, लेकिन इसका मतलब यह नहीं होगा कि संसद इससे बाध्य होगी।''

हाल ही में, केंद्र सरकार ने जम्मू–कश्मीर का विशेष दर्जा समाप्त करने पर जम्मू–कश्मीर राष्ट्रपति आदेश, 2019 जारी किया। इस बात पर बहस चल रही है कि सरकार ऐसा आदेश जारी कर सकती है या नहीं, जब राज्य में राज्यपाल शासन है। एक और सरकार इसे इस आधार पर न्यायोचित ठहरा रही है कि राज्यपाल शासन के दौरान राज्यपाल राज्य सरकार के किसी भी और सभी कार्यों को ग्रहण करता है, इसलिए सरकार की कार्यवाई संवैधानिक रूप से मान्य हैं लेकिन दूसरी तरफ सवाल यह है कि अगर राष्ट्रपति शासन (गवर्नर रूल) है तो यह कैसे काम करता है? क्योंकि जम्मू–कश्मीर में कोई चुनी हुई सरकार नहीं है, इसलिए विधानसभा की सहमति तब तक संभव नहीं है जब तक चुनाव के बाद नई सरकार नहीं बनती। मामला अब उच्चतम न्यायालय में है।

राज्यपाल की भूमिका

संविधान लागू होने के बाद से राज्यपाल का पद हमेशा विवादों का केंद्र रहा है। हर बार राज्यपाल की नियुक्ति में केंद्र सरकार की भूमिका और केंद्र सरकार के प्रतिनिधि के रूप में उनकी भूमिका के बारे में बहस होती है। यह भी प्रथा है कि केंद्र में सरकार बदलने के साथ सत्ताधारी दल द्वारा राज्यपालों को बदल दिया जाता है। 1977 में जब जनता पार्टी सत्ता

में आई तो कई राज्यों के राज्यपाल बदले गए। 1980 में कांग्रेस के सत्ता में लौटने पर भी यही घटना दोहराई गई। उसके बाद, हर सरकार जो भी सत्ता में है उसी प्रथा का पालन करती है। राज्यपाल की नियुक्ति और भूमिका को सुव्यवस्थित करने के लिए समय–समय पर विभिन्न सरकारों द्वारा कई आयोगों का गठन किया गया, लेकिन वास्तविक व्यवहार में कोई सकारात्मक परिवर्तन नहीं हुआ है।

आर्थिक और सामाजिक योजना

आर्थिक और सामाजिक नियोजन सातवीं अनुसूची की समवर्ती सूची में आता है, लेकिन संघ द्वारा नियुक्त नीति आयोग के माध्यम से भारत में राष्ट्रीय और क्षेत्रीय नियोजन पर संघ का अधिकार है। भारतीय संघवाद काफी परिपक्व हो गया है, और राज्यों का अपने आर्थिक और राजनितिक प्रबंधन पर पहले चरण की तुलना में कहीं अधिक नियंत्रण है राज्य भी आर्थिक और सामाजिक नियोजन की प्रक्रिया में प्रमुख भागीदार के रूप में उभर रहे हैं। स्वास्थ्य, शिक्षा, संस्थागत ढांचा कृषि विकास, भूमि सुधार और संगठनात्मक परिवर्तन आदि।

केन्द्रीय जांच ब्यूरो (सी.बी.आई)

सातवीं अनुसूची की संघ सूची की प्रविष्टि 8 में प्रदर्शित होने वाला शब्द जांच, "केन्द्रीय खुफिया और जांच ब्यूरो" (C.B.I.) को निर्देशित करता है। लेकिन पुलिस राज्य का विषय है और आपराधिक प्रक्रिया संहिता के तहत पुलिस को जांच करने का अधिकार है। लेकिन सीबीआई जांच करने वाली केन्द्र सरकार की प्रमुख एजेंसी बन गई है। जिस पर विपक्ष द्वारा हमेशा एक सामान्य आरोप लगाया जाता है कि सीबीआई केन्द्र सरकार के कठपुतली के रूप में काम करती है। सीबीआई पर अक्सर राज्य सरकार को परेशान करने के लिए केन्द्र का हाथियार होने का आरोप लगाया जाता रहा है जब सीबीआई ने 15 दिसम्बर 2015 को दिल्ली के मुख्यमन्त्री कार्यालय पर छापामारा और उसे सील कर दिया। मुख्यमन्त्री ने इसके लिए प्रधानमन्त्री और उपराज्यपाल को जिम्मेदार ठहराया , विपक्ष ने इसे "संघीय राजनिति पर गम्भीर हमले" के रूप में आरोपित किया। नवम्बर 2018 में जारी एक आदेश के माध्यम से आंध्र प्रदेश सरकार के मुख्यमन्त्री (एन. चन्द्रबाबू नायडू) ने राज्य में जांच करने के लिए केन्द्रीय एजेन्सी की शक्तियों को कम करते हुये, सामान्य सहमति वापस ले ली। सहमति की आवश्यकता इसलिए होती है क्योंकि इन एजेंसियों का अधिकार क्षेत्र इस अधिनियम के तहत दिल्ली और केन्द्र शासित प्रदेशों तक ही सीमित है। लेकिन आन्ध प्रदेश के नए मुख्यमन्त्री वाई एस जगनमोहन रेड्डी ने पिछले आदेश को उलट दिया है और केन्द्र जांच ब्यूरो (सीबीआई) को राज्य सरकार की पूर्व अनुमति के बिना राज्य में जांच और छापेमारी करने की अनुमति दी है। इसका प्रभावी अर्थ यह है कि सीबीआई अब आन्ध्र प्रदेश सरकार से अनुमति प्राप्त किए बिना राज्य में प्रवेश कर सकती है। सीबीआई द्वारा चिटफंड घोटाले की जांच से सम्बन्धित राज्य केन्द्र संकट ने 03 फरवरी 2019 को शाम 7 बजे के आसपास तीखा मोड़ ले लिया। जब सीबीआई अधिकारी दक्षिण कोलकता में पुलिस आयुक्त के आवास पर पहुंचे उन्होंने उससे पूछताछ करने के लिए आवास में घुसने की कोशिश की। लेकिन शेक्सपियर सरानी थाने के अधिकारियों ने सीबीआई अधिकारियों को इसमें प्रवेश करने से रोक दिया, वहां गए सीबीआई अधिकारियों को पुलिस की गाड़ी में बिठाया गया, पुलिस और सीबीआई अधिकारियों के बीच मुठभेड़ हुई क्योकि उन्हे वाहन में धकेल दिया गया था। पश्चिम बंगाल की मुख्यमन्त्री ममता बनर्जी उसी रात एस्प्लेनेड में मेट्रो चैनल के सामने अनिश्चितकालीन धरने पर बैठ गईं। उन्होंने कहा कि उनका आन्दोलन "लोकतन्त्र, सविधान और देश को बचाने" के लिए था। ये घटनाएं सीबीआई को लेकर केन्द्र और राज्य सरकारों के बीच संघर्ष को दर्शाती हैं और दिलचस्प बात यह है कि इस तरह का संघर्ष तभी पैदा होता है जब केंद्र और राज्य में अलग–अलग दल सत्ता में हों।

निष्कर्ष

पूर्वगामी चर्चा के आधार पर, यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि भारतीय मे संघीय संविधान की सभी विशेषतांए मौजूद हैं, केंद्र और राज्य संविधान द्वारा सौपें गए अपने–अपने क्षेत्र में कानून बनाने के लिए स्वतंत्र है। हालाँकि कुछ स्थितियों में केंद्र का वर्चस्व है जिसका उल्लेख संविधान मे भी किया गया है। यदि दोनों मे से कोई भी सरकार सीमाओं का उल्लंघन करने का प्रयास करती है तो स्वतंत्र न्यायपालिका एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है क्योकि सर्वोच्च न्यायलय को संविधान का रक्षक और गारंटर माना जाता है। भारत में संघवाद की अवधारणा संविधान के प्रांरभ से ही बदलती रहती है। राजनीतिक व्यवस्था में बदलाव के साथ यानी एक दलीय शासन के प्रभुत्व से गठबंधन सरकार के युग तक। क्षेत्रीय दलों और कमजोर गठबंधन सरकारों के उदय के बाद, महासंघ को विशेष रूप से अपने वित्तीय पहलुओं मे अधिक लचीला और समझौता करना होगा। जीएसटी एक उदाहरण है जहां राज्यों को समान रूप से कर लगाने की शक्ति है ताकि वे स्वायत्ता का आनंद ले सके, जो कि भारत के वित्तीय इतिहास में एक बड़ा कर सुधार है। केंद्र और राज्य सरकार दोनो को संघर्ष में शामिल होने के बजाय एक–दूसरे के सहयोग और समन्वय में काम करना चाहिए। हाल ही में, सुप्रीम कोर्ट ने एनसीटी (दिल्ली) मामले में सहयोगी संघवाद की अवधारणा पर जोर दिया जहां, केन्द्र और राज्य सरकारों दोनों को सामान्य उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए अपनी तत्परता व्यक्त करनी चाहिए और उन्हें मतभेदों के बावजूद सांमजस्यपूर्ण सह–अस्तित्व के मार्ग पर आगे बढ़ना होगा। यदि दोनों सरकारें किसी भी प्रकार के संघर्ष में शामिल होती हैं, तो अंतिम पीड़ित जनता होगी। दोनों सरकारें साझे लोगों पर और साझ क्षेत्र में एक साथ काम करती हैं, इसलिए आधुनिक समय में उन्हे समझ और सहयोग के साथ कार्य करना चाहिए।

सन्दर्भ सूची

1. Basu Durga Das; Introduction to the constitution of India
2. Basu Durga Das; Comparative Federalism
3. Singh Veerkeshwar Prasad; Bhartiya Shasan evam Raajneeti
4. Jain Dr. Pukhraj evam Faadia Dr. B.L ; Bhartiya Shasan evam Raajneeti
5. Kothari Rajini; Politics in India

6. Amal Ray. Inter Government Relations in India-A Study of Indian Federalism
7. Malik M. asad; Changing Dimensions of Federalism In India: An Appraisal As Quoted in, Govt. (NCT of Delhi) v. Union of India, (2018) 8 SCC 501 at para 92.
8. Srivastava Satish Chandra. Nature of Federalism in India, 2010.
9. Sunramanian K. "A Prime Ministerial Form of Government" the Hindu, 2014.
10. Jammu and Kashmir Reorganization Act. it reconstitutes the state of jammu and Kashmir into two Union Territories, one to be called Jammu and Kashmir (with Legislative Assembly) and the other Ladakha. This Act. will come into force on, 2019
11. Narayan Jayprakash. "A Challenge to Indian Federalism" The Hindu, 2013.
12. Administrative Reforms Commission, 1966, Raj Mannar Commission, 1971, Bhagwan Sahai Commission, 1971, Sarkaria Commission, 1983, the National Commission to review the working of the constitution, 200 and Second Administrative Reform Commission, 2005, 2013.
13. Venkateshwarlu K. " CM revokes Naidu's Decision, CBI can resume work" The Hindu, 2019.
14. Singh Shiv Sahay, Bagchi Suvojit. " Mamata Banerjee goes on stir after CBI Tries to quiz Kolkata Police chief" the Hindu, 2019.